★ हरि ॐ तत्सत् ★

॥ यतिकर्म-परिचय ॥

(मठाम्नाय सहित)

लेखक व प्रकाशक—

श्री श्री १०८ डंडी स्वामी शान्ता आश्रम जी महाराज

शान्तेश्वर मठ अस्सीघाट नं बी० १/१५२ जे० ४

वाराणसी

तृतीय वार } कार्तिक शुक्ल १२ { मूल्य

५०० } सं० २०४४ विक्रमीय { प्रेम

पुस्तक मिलने का पता—
श्री श्री १०८ डंडी स्वामी शान्ताश्रम जी महाराज
शान्तेश्वर मठ
अस्सीघाट, नं० बी०/१/१५२ जे० ४ वाराणसी

तृतीया वृत्ति—५००

मुद्रक—
राज प्रिंटिंग प्रेस,
रामबाग, मीरजापुर।

श्री श्री १०८ डंडी स्वामी शान्ताश्रम जी महाराज
मठाधीश शान्तेश्वर मठ वाराणसी

जीवनी—
ग्राम–राखी नेवादा, पो० हाथी बाजार, जि०–वाराणसी बरना नदी के किनारे दीक्षित ब्राम्हण परिवार में जन्म हुआ था। सन् ४० के लगभग संन्यास प्राप्त किया था।

मठ मछली बन्दर काशी

वंश परम्परा

दैनिक प्रार्थना

ॐ नारायणं पद्मभवं वषिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्र परासरं च,
व्यासं शुकं गौडपदम् महान्तं गोविन्द योगीन्द्र मथास्य शिष्यम्
श्री शंकराचार्य मथास्य पद्मपादं च हस्तामतकं च शिष्यम्।
तं त्रौटक वार्तिकार मन्यान्नस्मद गुरुं सततं मा नतोऽस्मि ॥

श्रुति स्मृति पुराणांनां मालयं करुणालयं,
नमामि भगवद् पादं शंकर लोक शंकरम्।
शंकरं शंकराचार्यम् केशवं बादरायणम्,
सूत्र भाष्य कृतौ वन्दे भगवानम् पुनः पुनः।
ईश्वरो गुरु रात्मेति मूर्ति भेद विभागिने,
व्योम वद् व्याप्त देहाय दक्षिणा मूर्तये नमः।

गुरु प्रार्थना

गुरुर्ब्रह्मा, गुरुर्विष्णु गुरु देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्त येन चराचरम्,।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।
परमानन्दं परमं सुखदं केवलं ज्ञान मूर्तिम्॥
द्वन्द्वातीतं गगन सदृशं तत्वमस्यादि लक्षणम्।
एकम् नित्यं विमल मचलं सर्व धी साक्षिभूतम।
भावातीतं त्रिगुण रहितं सद्गुरुं तं नमामि॥

अज्ञानतिमिरान्धस्य, ज्ञानाञ्जन शलाकया,
चक्षुरुन्मीलतं येन, तस्मै श्री गुरुवे नमः ।
कर्णधार गुरुं प्राप्तम् तद् वाक्य वलवद् धृढ़म्,
अध्यास वासनाम् त्यक्त्वा, तरन्ति भव सागरम् ॥
ध्यानमूलं गुरुर्मूर्ति पूजा मूलम तत्पदं
मन्त्र मूलं गुरुर्वाक्य, मोक्ष मूलं गुरु कृपा ।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते, ॥
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥
ॐ शान्तिः– ॐ शान्तिः– ॐ शान्तिः–

हरिः ॐ

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवा स्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन , तेह नाकं महिमानं सचन्त, यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः । ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरंचि नुतः शरण्यं,, भृत्यार्ति अहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं, वन्दे महा पुरुष ते चरणारविन्दं ॥ त्यक्तवा सुदुस्त्यज सुरेप्सित् राज लक्ष्मीं धर्मिष्ठ आर्य वचसा यद्गगाद अरण्यं । मायो मृगं दयितयेऽसित् मन्वधावद वन्दे महा पुरुष ते चरणारविन्दम ॥ सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण, हे यादव हे सखेति, अजानता महिमानं तवेदं मया प्रमादत् प्रणयेन वापि । त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धु श्च सखा त्वमेव । त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वम् मम देव देव ॥

॥ नमः पारवती पतये ॥

॥ ॐ तत्सत् ॥

मठाम्नाय

(१) शारदा मठ

प्रथमः पश्चिमाम्नायः शारदामठउच्यते ।
कीटवारः सम्प्रदायस्तस्य तीर्थाश्रमौ शुभौ ॥१॥
द्वारकाख्यं हि क्षेत्रं स्यात् देवः सिद्धेश्वरस्मृतः ।
भद्रकाली तु देवीस्यादाचार्यो विश्वरूपक ॥२॥
गोमतीतीर्थममलं ब्रह्मचारिस्वरूपकः ।
सामवेदस्य वक्ता च तत्र धर्मं समाचरेत् ॥३॥
जीवात्मपरमात्मैक्यबोधो यत्र भविष्यति ।
तत्वमसि महावाक्यं गोत्रोऽविगत उच्यते ॥४॥
सिन्धुसौवीरसौराष्ट्रामहाराष्ट्रास्तथान्तरा ।
देशाः पश्चिमदिक्स्था ये शारदामठभागिनः ॥५॥
त्रिवेणी सङ्गमे तीर्थे तत्वमस्यादिलक्षणे ।
स्नायात्तत्वार्थभावेन तीर्थनामा स उच्यते ॥६॥
आश्रमग्रहणे प्रौढ़ आशापाशविवर्जितः ।
यातायतविनिर्मुक्तः एष आश्रम उच्यते ॥७॥
कीटादयो विशेषेण वार्यन्ते जीवजन्तवः ।
भूतानुकम्पया नित्यं कीटवारः स उच्यते ॥८॥
स्वस्वरूपं विजानाति स्वधर्मपरिपालकः ।
स्वानन्दे क्रीडितो नित्यं स्वरूपो बटुरुच्यते ॥९॥

भावार्थ

पश्चिम प्रान्त में द्वारिका जी में शारदा मठ है। कीटवार सम्प्रदाय है। तीर्थ और आश्रम, इस मठ के संन्यासियों की उपाधियां हैं। द्वारिकाक्षेत्र है देवता सिद्धेश्वर हैं। देवी भद्र-काली हैं। आचार्य विश्वरूप हैं। गोमती तीर्थ है। ब्रह्मचारी की उपाधि स्वरूप हैं वेद सामवेद है। महावाक्य तत्वमसि है। गोत्र अविगत है। सिन्धु, सौवीर, सौराष्ट्र महाराष्ट्र तथा अन्य उनके अन्तर के पश्चिम दिशा के देश शारदा मठ के अधीन रखे गये।

तत्वमसि आदि लक्षणायुक्त त्रिवेणी तीर्थ संगम में तत्वार्थ भाव से जो स्नान करता है, उसको तीर्थ कहते हैं। आशा रूपी पाश से विमुक्त होकर जो संन्यास आश्रम में दृढ़ रहता है तथा यात अयात भावना से जो विमुक्त हो जाता है अर्थात आवागमन से रहित हो जाता है, उसको आश्रम कहते हैं। कीटादि जीवों की जो हिंसा नहीं करता है और सब प्राणियां पर दयादृष्टि रखता है, उसको कीटवार कहते हैं। जो अपने आत्म स्वरूप को जानता है, स्वधर्म पालन करता है, अपने आत्मानन्द में जो क्रीड़ा करता है, उसको स्वरूप कहते हैं।

(२) गोवर्धन मठ

पूर्वाम्नायों द्वितीयः स्याद्गोवर्द्धनमठः स्मृतः ।
भोगवारः सम्प्रदायो बनारण्ये पदे स्मृते ॥१॥
पुरुषोत्तमं तु क्षेत्रं स्याज्जगन्नाथोऽस्य देवता ।

विमलाख्या हि देवीस्यादाचार्यः पद्मपादकः ॥२॥
तीर्थं महोदधि प्रोक्तं ब्रह्मचारी प्रकाशकः ।
महावाक्यं च तत्र स्यात् प्रज्ञानं ब्रह्म चोच्यते ॥३॥
ऋक्वेदपठनं चैव कश्यपगोत्रमुच्यते ।
अङ्गवङ्गकलिङ्गाश्च मगधोत्कलबर्ब्बराः ॥४॥
गोवर्द्धनमठाधीनः देशा प्राचीव्यवस्थिताः ।
सुरम्ये निर्जने स्थाने वने वास करोति यः ॥५॥
आशाबन्धविनिर्मुक्तौ वननामा स उच्यते ।
अरण्ये संस्थिते नित्यमानन्दे नन्दने वने ॥६॥
त्यक्त्वा सर्वमिदं विश्वमारण्यं परिकीर्त्यते ।
भोगा विषय इत्युक्तो वार्य्यते येन जीविनाम् ॥७॥
सम्प्रदायो यतीनाञ्च भोगवारः स उच्यते ।
स्वयं ज्योतिर्विजानाति योगयुक्ति विशारदः ॥८॥
तत्वज्ञानप्रकाशेन तेन प्रोक्तः प्रकाशकः ।

भावार्थ

पूर्व प्रान्त में जगन्नाथजी में गोवर्धन मठ है । भोगवार सम्प्रदाय है। वन और आरण्य इस मठ के सन्यासियों की उपाधियाँ हैं। पुरुषोत्तम क्षेत्र है। जगन्नाथ जी देवता हैं। विमलाख्या देवी हैं। आचार्य पद्मपाद हैं। तीर्थ महोदधि है । ब्रह्मचारी उपाधि है। वेद ऋगवेद है। महावाक्य 'प्रज्ञानं ब्रह्म' है। कश्यप गोत्र है।

बिहार, बङ्गाल, उड़िसा, मगध आदि पूर्व दिशा के प्रान्त गोवर्द्धन मठ के अधीन रखे गये हैं।

सुन्दर निर्जन वन में वास करता है और आशा, बन्धन से जो विमुक्त रहता है, उसकी उपाधि को वन कहते हैं। जो अरण्य में रहता है और परमात्मा रूपी नन्दन वन में आनन्दित रहता है तथा समस्त संसारी भावनाओं को त्याग देता है, उसकी उपाधि को आरण्य कहते हैं। जिनके द्वारा प्राणी भोगादि विषयों से निवृत्ति प्राप्त करते हैं, यतियों के उस सम्प्रदाय को भोगवार कहते हैं। तत्वज्ञान प्रकाश के द्वारा जो स्वयमात्म ज्योति को जानता है तथा जो योगयुक्ति विशारद है उसको प्रकाश कहते हैं।

(३) ज्योतिर्मठ

तृतीयस्तूत्तराम्नायो ज्योतिर्णाम मठोभवेत्।
श्रीमठश्चेति वा तस्य नामान्तरमुदीरतम् ॥१॥
आनन्दवार विज्ञेयः सम्प्रदायोऽस्य सिद्धिदः।
पदानि तस्य ख्यातानि गिरिपर्वतसागरा ॥२॥
बदरीकाश्रमं क्षेत्रं देवो नारायण स्मृतः।
पूर्णागिरी च देवी स्यादाचार्य्यो स्त्रोटकः स्मृतः ॥३॥
तीर्थंबालकनन्दाख्य ह्यानन्दो ब्रह्माचार्य्योभूत्।
अयमात्मा ब्रह्म चेति महावाक्यमुदाहृतम् ॥४॥
अथर्ववेदवक्त च भृग्वाख्यो गोत्रमुच्यते।
कुरुकाश्मीरकाम्बोजपाञ्चालादि विभागतः ॥५॥
ज्योतिर्मठवंशा देश उदीची दिगवस्थितः।
वासो गिरिवने नित्यं गीताध्ययनतत्परः ॥६॥

गम्भीराचलबुद्धिश्च गिरिनामा स उच्यते।
वसन् पर्व्वतमूलेषु प्रौढ़ं ज्ञानं बिभर्ति यः ॥७॥
सारासार विजानाति पर्वतः परिकीर्त्यते।
तत्वसागरगम्भीरो ज्ञानरत्नपरिग्रहः ॥८॥
मर्य्यादां नैव लङ्घेत सागरः परिकीर्त्यते ॥६॥
आनन्दो हि विलासश्च वार्य्यते येन जीविनाम्।
सम्प्रदायो यतीनां च नन्दवारः स उच्यते ॥१०॥
सत्यं ज्ञानमनन्तं यो नित्यं ध्यायेत तत्ववित्।
स्वानंदे रमते चैव आनन्दः परिकीर्त्तितः ॥११॥

भावार्थ

उत्तर प्रान्त में बद्रीनारायण जी में ज्योतिमठ है। आनन्द-वार सम्प्रदाय है। गिरि, पर्वत और सागर इस मठ के सन्यासियों की उपाधियां हैं। क्षेत्र बदरीकाश्रम है। बद्रीनारायण देवता हैं। पूर्ण गिरि देवी हैं। आचार्य त्रोटकाचार्य हैं। तीर्थ अलकनन्दा है। ब्रह्मचारी की उपाधि आनन्द है। वेद अथर्वण है। महावाक्य 'अयमात्मा ब्रह्म' हैं भृग्वाख्य गोत्र है।

कुरु, काश्मीर, कम्बोज, पञ्चाल आदि उत्तर दिशा के प्रान्त ज्योतिमठ के अधीन हैं।

जो गिरि तथा वन में निवास करता है और नित्य गीता के अध्ययन में तत्पर रहता है, उस गम्भीर अचल बुद्धि वाले को गिरि कहते हैं। जो पर्वत की मूल पर वास करता है, जो आत्मज्ञान में प्रौढ़ है। तथा सारासार को जानता है, उसको पर्वत कहते हैं। जो तत्सागर

में गम्भीर है, जिसने ज्ञान रत्नों को धारण कर लिया है तथा जो मर्यादा का उल्लङ्घन नहीं करता है, उसको सागर कहते है। जिसने प्राणियों को संसारी विलास रूपी आनन्द से मुक्त कर दिया है, यतियों के उस सम्प्रदाय को नन्दवार कहते हैं। जो तत्वविन् 'सत्यं ज्ञानमनन्तं की नित्य ध्यान करता है तथा आत्मानन्द में रमण करता है, उसको आनन्द कहते हैं।

(४) शृंगेरी मठ

चतुर्थो दक्षिणाम्नायः शृंगेरि तु मठो भवेत् ।
सम्प्रदायो भूरवारो भूर्भुवो गोत्रमुच्यते ॥१॥
पदानि त्रीणि ख्यातानि सरस्वती भारती पुरी ।
रामेश्वेराह्वय क्षेत्रमादिवाराहो च देवता ॥२॥
कामाक्षी तस्य देवी स्यात् सर्वकामफलप्रदा ।
पृथ्वीधराख्य आचार्य्यस्तुङ्गभद्रेति तीर्थकम् ॥३॥
चैतन्याख्यो ब्रह्मचारी यजुर्वेदस्य पाठकः ।
अहं ब्रह्मास्मि तत्रैव महावाक्यं समीरितम् ॥४॥
आन्ध्रद्राविड़कर्णाटकेरलादिप्रभेदतः ।
शृंगेर्य्यधीना देशास्ते ह्यवाचिदिगवस्थितः ॥५॥
स्वरज्ञानरतो नित्यं स्वरवादी कवीश्वरः ।
संसार सागरसाहस्तास्तासौ हि सरस्वती ॥६॥
विद्याभारेण सम्पूर्णः सर्वभार परित्यजन् ।
दुःखभारं न जानाति भारती परिकीर्त्यते ॥७॥

ज्ञानतत्वेन सम्पूर्णा पूर्णतत्वपदे स्थितः ।
पर ब्रह्मरतो नित्यं पुरीनामा स उच्यते ॥८॥
भूरीशब्देन सौवर्ण्य वाच्यते येन जीविनाम ।
सम्प्रदायो यतीनाञ्च भूरिवारः स उच्यते ॥९॥
चिन्मात्रं चैत्यरहितं अनन्तमजरं शिवम ।
यो जानाति स वै विद्वान् चैतन्यं तद्विधीयते ॥१०॥
सर्व्वादेषा सुविज्ञेया चतुर्मठविधायनी ।
तामेत्य समुयश्चित्य आचार्य्याः स्थापिता क्रमात् ॥११॥

भावार्थ

दक्षिण प्रान्त में शृंगेरी में शृंगेरी मठ है। भूरिवार सम्प्रदाय है। सरस्वती, भारती, पुरी इस मठ के संन्यासियों की उपाधियाँ हैं। रामेश्वर क्षेत्र है। आदि वाराह देवता हैं। देवी कामाक्षा है। तीर्थ तुङ्गभद्रा है। आचार्य पृथ्वीधर है। ब्रह्मचारी की उपाधि चैतन्य है। वेद यजुर्वेद है। महावाक्य 'अहम्ब्रह्मास्मि' है। भूभुवा गोत्र है।

आन्ध्र, द्रविड़, कर्णाटकआदि दक्षिण दिशा के प्रान्त शृंगेरी मठ के अधिन रखे गये है। जो स्वर ज्ञान में निरन्तर रत रहता है, जो स्वरवाद में कवीश्वर है, संसार के सारासार को जसने हस्तामलक कर लिया है, उसको सरस्वती कहते हैं। विद्याभार से जो पूर्ण है, अन्य सर्व भारों को जिसने त्याग दिया है तथा जो दुःख भार को नहीं जानता है, उसको भारती कहते हैं। जो ज्ञान तत्व करके सम्पूर्ण होकर पूर्ण

तत्व के पद पद पर स्थिति हैं तथा जो परब्रह्म में नित्य रत र-हता है, उसको पुरी कहते हैं। भूरि शब्द करके अपने-२ वर्णों में सुरक्षित रहने के निमित्त जो प्राणियों को सुशिक्षित करता है उस यति सम्प्रदाय को भूरिवार कहते हैं। जोचिन्मत्र, इति रहित, अनन्त, अजर शिवजी को जानता है, उस विद्वान्‌को चैतन्य कहते हैं। पूर्वोक्त प्रकार चारों मठों की मर्यादा नियत करके उनका संचालन करने के निमित्त जगद्गुरु १००८ श्रीमत् शङ्कराचार्य महाराज ने अपने योग्य शिष्यों को आचार्य पद पर नियत कर दिया। अभी तक इन चारों मठों का और अन्य मठों का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है।

॥ इति मठाध्यायः ॥

—: ☆ :—

यतिकर्म—परिचय

संध्या

संध्यापदं ब्रह्मवाचकम्। जीवब्रह्मणोरेक्यं नाम संधि तत्रभवा संध्या कर्मरूपा लक्षणाया तत्कर्म अपिब्रह्मरूपमेव। अतः यतिभिः संध्या क्रियते।

अर्थ :—जीव ब्रह्म की एकता के लिए जो कर्म प्रातः सायं किया जावे, वह कर्म भी ब्रह्मरूप हैं। इसलिए यति (संन्यासी) लोगों को संध्या करनी चाहिये।

भस्मधारण, आचमन,प्राणायाम

तत्रादौ भस्मधारणं आचमनं प्राणायामाः द्वादश प्रणवाभि मंत्रितम् भस्मधारणं च, भस्मधारणेन देहशुद्धिः। आश्रम कर्माणि अधिकारः

भस्मधारणम्

'जलं अनेन मंत्रेण मिश्रितं कार्यं जलमितिभस्म, स्थलमितिभस्म, व्योमेतिभस्म, सर्वॐहवा इदंभस्म, इस मन्त्र से भस्म में जल मिलाकर द्वादश बार प्रणवसे अभिमन्त्रित करे। द्वादश बार प्रणव का जप करते हुए भस्मधारण करें, मस्तक पर, हृदय, नाभि, गले अंशे बाहु संधिषु पृष्ठदेशे - इन स्थानोंपर भस्म लगावें।

आचमन प्राणायाम

प्रणव का ३ बार उच्चारण करके आचमन करें और कम से कम आठ बार प्रणव द्वारा प्राणायाम करे। आठ बार प्रणवोच्चारण से पूरक और आठ बार या इससे अधिक कुम्भक प्राणायाम करें और रेचक भी आठ बार ही करें।

योग मार्ग में आठ और इससे अधिक (८० अस्सी का विधान हठयोग प्रदीपिका में है। विशेष साधक इससे भी अधिक कर सकते हैं। प्राणायाम की गतिवृद्धि कुम्भक में होनी चाहिये। (त्रिवारं आचमनम् द्विवारं मार्जनम् अष्टौ प्राणायामा:)।

संध्या क्रम सूची

आगे संध्या की विधि के साथ मंत्रपाठ आदि लिखे है, उसकी सूची यहाँ दी जाती है जिससे कर्म में पूरी सुविधा रहे।

(१) कुशासन पर बैठें।

(२) पहिले लिखे मन्त्रों से भस्मधारण करें।

(३) आचमन करें।

(४) प्राणायाम करें।

(५) 'भिक्षूणां पटलंयत्र,' मंगलाचरण।

(६) 'मं मंडुकायनमः' इत्यादि से भूत शुद्धि।

(७) पृथ्वी पर हाथ रखकर आसन का विनियोग हाथ में जल लेकर पढ़ें।

(८) पृथ्वी त्वया धृता लोका' इससे भूतशुद्धि, 'अपसपतु ऐभूता' ४ मन्त्र पढ़ें

(९) प्राणप्रतिष्ठा हृदय पर दाहिना हाथ रखकर— शरीर मिन्द्रियाण्यात्मा, मन्त्र पढ़ें।

(१०) वन्दनम् हृदय में 'ब्रह्माद्यशेष गुरु पारपर्येन' ध्यान।

(११) फिर हृदय में 'प्रणव' का ध्यान करें।

(१२) पुनः ६ बार प्राणायाम करें।

(१३) ततः प्रणव से करशुद्धि करें 'प्रकोष्ठ' मणिबन्ध, कूर्पर, हस्तादि को ऊपर जलसे धावें षडंगन्यास।

(१४) 'ततोन्यासः भूरब्रह्मात्मनेनम ' इत्यादि मन्त्रो से अंगुष्ठ हृदयादि न्यास करें। फिर उच्चस्वर से प्रणव का प्लुतोच्चारण करते हुए हृदय—शिर से लेकर पाद-अंगुष्ठ तक ३ बार न्यास करें।

(१५) ततः तालत्रयंकृत्वा वाणमुद्रा से ३ वार चुटकी बजावें।

(१६) बाद में प्रणव से दिग्बन्ध करें।

(१७) 'ओं हं द्युनिनिवीजेनाकाश प्राकरं विचिंत्य'—इत्यादि पाँच मन्त्रों से पांचों तत्वों का चिन्तन करें।

(१८) तदन्तर कराग्र भाग को शिर पर रखकर परमाकाश का चिन्तन करते हुए हृदयस्थ ज्योतिस्वरूप परमात्मा का ध्यान करें।

(१९) ओं नमो नारायणेत्यष्ट वारं जपेत्।

(२०) प्रणव विचारः विनियोग ततः स्तवनाम्। 'ओंकार निरमैक वेद्यं मनिशं' आदि ७ श्लोकों से तथा प्रणव बोधनार्थ माँडूक्योपनिषद् पाठः।

(२१) ततः मानस पूजा प्रकारः 'ओं विष्णुं भास्वत' आदि से प्रणवयुक्त पाठ पढ़ें।

(२२) तत्र अष्टोत्तर शतं जप करते हुए तीन प्राणायाम करें और जल से अष्टदल कमल बनाकर अष्टाक्षर मंत्र लिखें।

(२३) हाथ के दोनों अंगुष्ठों से विष्णु का ध्यान करें—'ओं-आगच्छदेवदेवश' इस मंत्र द्वारा।

(२४) शंख, चक्र, गदा, धेनु, गरुड़ मुद्रा बनावें, 'दिव्यात्मने किरीटायनमः' इससे नमस्कार करें। पंचोपचार पूजन, 'ओं लं पृथ्वी गन्ध तन्मात्र' इनसे गन्ध, पुष्प, धूप, दीप नैवेद्य की

मानसिक कल्पना करते हुए मानसिक पुष्पाँजलि दें। 'ओं वभित्यमृत बीजेन' धेनुमुद्रा से अमृतरूप ध्यान कर तर्पण करें।

(२५) प्रणव से १२ बार जल अभिमंत्रित कर १०८ बार ऋषियों का तर्पण करें। 'ओं ऋषीस्तर्पयामि' १२ बार तथा अन्यों से भी बारह-बारह बार करने से १०८ होते हैं।

(२६) जल के ३ बार अर्घ्य प्रदान कर 'आत्मैवेदं सर्वम्' इत्यादि से देवताओं का विसर्जन (उत्तिष्ठोत्तिष्ठ)।

(२७) दक्षिण हाथ में जल लेकर प्रणव के १२ बार मंत्रित कर बायें हाथ में जल लेकर शिर पर छोड़ें।

(२८) ३ बार आचमन ३ बार प्राणायाम।

(२९) दक्षिण हाथ में जल लेकर 'ॐ मनसा चिंतितं यन्मे' इससे संकल्प करें।

(३०) प्रणव उच्चारण से दन्ड तर्पण करें। १२ बार दण्ड-मूल, १२ बार दण्डाग्रभाग, १२ मुद्रा में, ३ बार ग्रन्थियों में, मध्यभाग में दो २ बार मूल में जल से ६ लिखकर पैर पर जल छोड़ें, अग्रभाग में सात लिखकर शिर में जल छोड़ें।

(३१) 'अस्माकम् कुलेजाता' इससे पितरों का स्मरण तर्पण का विधान है। तब क्रम से सूर्य, दिक्पाल, गुरुदेव की वंदना करें।

संन्यासी के लिए प्रणव जप २१ हजार ६०० प्रतिदिन आवश्यक है। 'यतेः कर्तव्य द्वयमेव—प्रणव जपः, उपनिषद् चिन्तनम्'।

संकल्प

(३२) अद्य सूर्योदयमारभ्य सूर्योदयपर्यंतं षट शताधि-कैकविंशति सहस्र संख्यात्मकं अजपा मन्त्र जप करिष्ये।

समर्पण

पूर्वेद्यु: अहोरात्रा चरितोच्छ्वास निश्चात्मक षटशताधिकैक विंशति सहस्र संख्याकान् अजपा जपान मूलाधारस्थ गणपतये षटशतानिसमर्पयामि, स्वाधिष्ठानस्थ ब्रह्मणे षट सहस्राणि समर्पयामि, मणिपूरस्थ विष्णवे षट सहस्राणि समर्पयामि, अनाहतस्थ रुद्राय षट सहस्राणि समर्पयामि, विशुद्ध चक्रस्थ जीवात्मने सहस्रं समर्पयामि, आज्ञाचक्रस्थ परमात्मने सहस्रं समर्पयामि, सहस्रारस्थ गुरुवे सहस्रं समर्पयामि।

ऊपर के क्रम के जान लेने पर संध्या कर्म करने में सुगमता रहेगी। अब आगे यतिसंध्या लिखी जाती है।

॥ इति यतिकर्म-परिचय ॥

—:o:—

यति-संध्या

तत्रादौ भस्मधारणाचमनप्राणायामाः ॥

द्वादशप्रणवाभिमन्त्रितभस्मधारणञ्च ॥

मंगलम्

भिक्षूणां पटलं यत्र विश्रान्तिमगमत्सदा ॥ तत्रैवदं ब्रह्मतत्वं ब्रह्ममात्रं करोतु माम् ॥१॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ॥ प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये॥२॥

सच्चिदानन्दरूपाय कृष्णायाक्लिष्टाकारिणे ॥ नमो वेदान्त-वेद्याय गुरुवे बुद्धिसाक्षिणे ॥३॥

भूशुद्धिः

ॐ मं मण्डुकायनमः ॥ ॐ कं कालाग्निरुद्रायनमः ॥ ॐ कुं कूर्मायनमः ॥ ॐ आं आधारशक्त्यैनमः ॥ ॐ अं अनन्तायनमः ॥ ॐ पं पृथिव्यै नमः ॥ पृथिव्यामेरुपृष्ठऋषिः कूर्मो-देवता सुतलं छन्दः आसने विनियोगः ॥ पृथिवीत्वयाधृता-लोका देवि त्वं विष्णुनाधृता। त्वञ्च धारयमां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ॥१॥

भूतशुद्धिः

अपसर्पन्तु ये भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नक-र्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥१॥ अपक्रामन्तुभूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम् ॥ सर्वेषामविरोधेन सन्ध्याकर्मसमारभे ॥२॥ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम ॥ भैरवाय नमस्तुभ्य-मनुज्ञां दातुमर्हसि ॥३॥ शरीराकारभूतानां भूतानां यद्विशोध-नम् ॥ अव्यक्तभूतसंपर्कोऽभूतशुद्धिरियंमता ॥४॥

प्राणप्रतिष्ठा

शरीरमिन्द्रियाण्यत्मा पञ्चभूतानि सूक्ष्मता। प्राणाधाना-दिकं सर्वमहमेव चिदात्मकम् ॥१॥

नोट—अद्वैतवादी सन्यासियों का यह मत है कि उनके लिए भू शुद्धिः, भूतशुद्धि आवश्यक नहीं है।

प्राण प्रतिष्ठा का सूत्र ऊपर आ चुका है। इस पांचभौतिक शरीर में ब्रह्म की प्रतिष्ठा या ब्रह्म का प्रकाश इस तरह समझना चाहिये कि दश इन्द्रिय, आत्मा (अन्तःकरण), पंचतन्मात्रा (रूपतन्मात्रा, रसतन्मात्रा, गंधतन्मात्रा स्पर्शतन्मात्रा, शब्दतन्मात्रा,)

पंच प्राण-प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, जो ऊर्ध्वगतिवाला, श्वासोच्छ्वास है यह प्राण कहा गया है। अधो-गतिवाला अपान, कंठ देश में रहने वाला उदान सर्व शरीर में जिसकी गति है वह व्यान है। नाभिप्रदेश में जिसकी गति है वह समान है यही चिदात्मा का स्वरूप है। इस प्रकार चैतन्य स्वरूप ब्रह्म की भावना संध्याकाल में करनी चाहिये।

वन्दनम्

हृदये हस्तं निधाय ब्रह्माद्यशेषगुरुपारंपर्येण यावत्स्वगुरुपादाम्बुज तावत्प्रणौमीति शिरसि हस्त निधाय ॥ ॐ नारायणाय नमः ॥ ॐ पद्मभवाय नमः ॥ ॐ वसिष्ठाय नमः ॥ ॐ शक्त्यै नमः ॥ ॐ पराशराय नमः ॥ ॐ व्यासाय नमः ॥ ॐ शुकाय नमः ॥ गौडपादाचार्येभ्यो नमः ॥ ॐ गोविन्द भगवत्पूज्यपादाचार्येभ्यो नम ॥ ॐ शङ्कराचार्येभ्यो नमः ॥ ॐ विश्वरूपाचार्येभ्यो नमः ॥ पद्मपादाचार्येभ्यो नमः ॥ ॐ हस्तामलकाचार्येभ्यो नमः ॥ ॐत्रोटकाचार्येभ्या नमः ॥ ॐ समस्तब्रह्मविद्यासम्प्रदायप्रवर्तकाचार्येभ्यो नमः ॥ ॐ ग गुरुभ्यो नमः ॥ ॐ पं परमगुरुभ्यो नमः ॥ ॐ पं ३ परमेष्ठिगुरुभ्यो नमः ॥ ओं पं परात्परगुरुभ्या नमः ॥

॥ ॐ वामस्कन्धे गंगणपतयेनमः ॥ ॐ दक्षिणस्कन्धे दं दुर्गायै नमः ॥ ॐ वामकुक्षौ क्षं क्षेत्रपालायनमः॥ ॐ दक्षिणकुक्षौ सं सरस्वत्यैनमः ॥ ॐ पं परमात्मनेनमः नाभौ ॥ ॐ परब्रह्मणेनमः हृदये ॥

ततो हृदयकमलमध्ये सर्वतेजोमयं परब्रह्मस्वरूप प्रणवं ध्यात्वा हृदयमालमेत् ॥ षट्प्राणायामान् कृत्वा प्रणवेन करशुद्धिं कुर्यात् ॥ प्रकण्ठे मणिबंधेचकुर्पयोर्हस्तयोस्तले ॥ तत्पृष्ठेचतदग्रे च करशुद्धिरुदाहृता ॥१॥

न्यासाः

ॐ भूरज्ञानात्मने तुषारवर्णायाङ्गुष्ठाभ्यां नमः ॥ ॐ भुवः प्राजापत्यात्मनेरक्तवर्णाय तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ स्वः सूर्यात्मने श्यामवर्णायमध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ महः ब्रह्मात्मने नीलवर्णायानामिकाभ्यांनमः ॥ ॐ जनः ज्ञानात्मने कृष्णवर्णाय कनिष्ठकाभ्यांनमः ॥ ॐ तपः सत्यामने श्वेतवर्णाय करतलकरपृष्ठाभ्यां नम ॥ एवं हृदयादि ॥ ततोऽस्त्रुत्रोच्चारेणप्रणवेन हृदयमारभ्य शिरः प्रभृति पादाङ्गुष्ठपर्यन्तं त्रिवारं व्यापकं कुर्यात् ॥ ततस्तालत्रयं कृत्वा बाणमुद्रया छोटिकात्रयञ्चविधाय प्रणवेन दिग्बंधं ॐ हंहमिति बीजेनाकाशप्राकारं विचिन्त्य वायुप्राकारं विचिन्त्य रंरमित्यग्निप्राकारंविचिन्त्य वंवमितिजलप्राकारं विचिन्त्य लंलमिति पृथ्वीप्राकारं विचिन्त्य कराग्रं ब्रह्मरन्ध्रे निधाय परमाकाशं विचिन्तयेत ॥ स्फुरत्तारकसंकाशं विद्युत्पुञ्ज-समप्रभम् ॥ हृदिस्थं परमं ध्यायेदोंमितिज्योतिरूपकम् ॥१॥ ॐ नमो नारायणायेत्यष्टवारं जपेत् ॥

भावार्थः—श्वास छोड़ना, प्रणवोच्चारणम् । त्वरयैव एकाग्रता साधकम् । अतः व्यापकं त्रिवारं कुर्यात् । प्रकाशमान् देदीप्यमान तारकों के समान, बिजली के समान कांतिवाला हृदयस्थ परमज्योति स्वरूपी ॐ कार का ध्यान करें और अष्ठवार प्रणव सहित नारायण का जप करें। प्रणव बोधनार्थं माण्डूक्योपनिषद् पाठः ।

प्रणवविचारः

ॐ प्रणवस्यान्तर्यामी ऋषि दैवी गायत्रीच्छन्दः परमात्मा देवता नातव्यगोत्रोत्पन्नो ब्रह्मपुत्रकः श्वेतोवर्णो उदात्तस्वरः ज्ञानाग्निमुख ॐ अ बीज ॐ उ शक्ति ॐ म कीलकं मम मानार्थे जपे विनियोगः ॥ ॐ अकारस्याग्निऋषिर्दैवीगायत्री-च्छन्दः ब्रह्मादेवता क्लीं बीज क्रियाशक्ति पीतोवर्णः जागृदव-स्थाभूःस्थान-मुदात्तस्वरः ऋग्वेदोगार्ह पत्योऽग्निः रजोगुणः प्रातःसवनं विश्वात्मा पृथ्वीतत्वं सृष्टिक्रियाव्याप्त्यर्थे विनियोग ॥ ॐ उकारस्य वायुर्ऋषिस्त्रिष्टुपछन्दः विष्णुर्देवता श्री बीज ज्ञानशक्तिः विद्युद्वर्णः स्वप्नावस्था भुवःस्थानमनुदात्तस्वरः यजुर्वेदो दक्षिणाग्निः सत्वगुणः माध्यन्दिनसवन तैजसआत्मा-न्तारक्षतत्वं स्थितिक्रियोत्कर्षार्थे विनियोगः ॥ ॐ मकारस्य सूर्यऋषिजगती-च्छन्दः ईश्वरो देवता ह्रीं बीजं द्रव्यशक्तिः श्वेतोवर्णः सुषुप्त्यवस्था स्वःस्थानं स्वरितःस्वरः सामवेदः आह_वनीयोऽग्निः तमोगुणः सायंसवन प्राज्ञात्मा द्यौस्तत्वं संहार-क्रियार्थे विनियोगः ॥ ॐ अर्धमात्रायाः वरूणऋषिर्विराट छन्दः पुरुषो देवता क्लीं बीज विज्ञानशक्तिः सर्ववर्णाः तुरीयावस्था

भूर्भवः स्वः स्थानानि उदात्तास्वरितस्वराः अथर्ववेदोधाना-दोवासंवर्तकोऽग्निः सर्वे-गुणाः सर्वाणि सवनानि सर्वे आत्मानः पृथ्व्यंतरिक्षदिवास्तत्वानि सृष्टिस्थितसंहारक्रियार्थे विनियोगः। ॐ ध्वनेर्ब्रह्मर्षिरव्यक्तगायत्रीच्छन्दः परमानन्दो देवता हंसो बीजं चिच्छक्तिः नादः स्वरूपं ब्रह्मात्मास्वःस्थानं उन्मन्यवस्था ममम़ोक्षार्थे जपे विनियोगः।

स्तवनम्

ॐकारं निगमैक वेद्यमनिशं वेदान्ततत्वास्पदं चोत्पत्ति-स्थितिनाशहेतुममलं सपूर्ण विश्वात्मकम्। विश्वत्राणपरायणं श्रुति-शतैः संप्रोच्यमानं प्रभुं सत्य ज्ञानमनंतमूर्तिममलं शुद्धात्मकं तं भजे ॥१॥ जगदङ्कुरकन्दाय सच्चिदानन्दमूर्तये। गलिताखिलभेदाय नमः शान्ताय विष्णवे ॥२॥ यद्बोधादिदं भाति यद्बोधाद्विनिवर्तते ॥ नमस्तस्मै परानन्दवपुषे परमात्मने ॥३॥ अविकाराय शुद्धाय-नित्याय परमात्मने ॥ नमः सदैकरू-पाय विष्णवे प्रभविष्णवे।४॥ यदज्ञानप्रभावेण दृश्यते सकलं जगत्। यद्ज्ञानच्छेय आप्नोति तस्मै ज्ञानात्मने नमः ॥५॥ अनात्मभूते देहादावात्मबुद्धिस्तुदेहिनाम् ॥ सा विद्या तत्कृतो-बन्धस्तन्नाशोमोक्ष उच्यते ।६॥ बन्धमोक्षौ न विद्येते नित्यमुक्तस्य चात्मनः ॥७॥

उपरोक्त स्तवन के श्लोकों का भावार्थ यह है कि ओंकार स्वरूप शुद्ध बुद्ध वेदों द्वारा प्रतिपादित और संसार की उत्पत्ति स्थित, लय का कारण, सम्पूर्ण विश्व का रक्षण करने में समर्थ, वेदान्त तत्व का स्थान— ऐसा जो प्रभु सत्यज्ञान अनन्त की मूर्ति है, उसका हम स्मरण करते हैं ॥१॥

जगद्रूपी अंकुर के बीज, सच्चिदानन्द मूर्तिस्वरूप, जिसके अखिल भेद नष्ट हो गये—ऐसे शांतरूप विष्णु को हम नमस्कार करते हैं ॥२॥

जो परमात्मा परमानन्द स्वरूप है, जिसके अज्ञान से यह जगत् भासता है और ज्ञान से नष्ट हो जाता है, उसको प्रणाम करते हैं ॥३॥

ओंकार रूपी जो विष्णु सर्व समर्थ है, विकार रहित, शुद्ध, नित्यसर्वदा एक स्वरूप में रहने वाले परमात्मा को नमस्कार है ॥४॥

जिसके अज्ञान के सामर्थ्य से यह समस्त संसार दीखता है और उसके ज्ञान से ही ब्रह्म प्राप्ति होती है, ऐसे ज्ञानस्वरूपी ओंकार को नमस्कार है ॥५॥

अनात्म स्वरूपी देहेन्द्रियादि पदार्थों में देहाभिमानी पुरुषों को जो आत्मबुद्धि है, वही अविद्या है और अविद्या से जीव बन्धन में है। अविद्या के नाश से मोक्ष है। नित्यमुक्त आत्मा बन्धमोक्ष से रहित है ॥६॥

पंचीकरणम्

ॐ अथातः परमहंसानां समाधिविधिं व्याख्यास्यामः ॥ सत्कुंर वाच्यमविद्याशबलं ब्रह्म ब्रह्मणोऽव्ययक्तमव्यक्तान्म-हन्महद्-तोऽहं कार र-हङ्कारात्पत्तन्मात्राणि पंचतन्मात्रेभ्योऽखिलं जगत्। पंचानां भूतानामेकैकं द्विधा समं विभज्य स्वस्वार्धभागं विहायैकं तरेषु योजनात्पंञ्चपञ्चकृतेषु पंचीकरणं भवति। अध्यारोपापवादाभ्यां निष्प्रपंच प्रपंचयते ॥ तत्र

पंचीकृतपंचमहाभूतानि तत्कार्यञ्च सर्वं विराडुच्यते ॥ एतत्स्थूलशरीरमात्मनरिन्द्रियैरर्थो-पलब्धिर्जागरितं तदुभयाभिमान्यात्मा विश्वमेतत्त्रयमकारः अपंचीकृतपंचमहाभूतानि तत्कार्यञ्चसर्वं सप्तदशकं भौतिकं लिंग हिरण्यगर्भ इत्युच्ते पंचप्राणा दशेन्द्रियाणि:मनो बुद्धिश्च ।

एतत्सूक्ष्मशरीरमात्मनः करणेषूपसंहृतेषु जागरितसंस्कारजः प्रत्यय सविषयः स्वप्नस्तदुभयाभिमान्यात्मा तैजसः एतत्त्रयमुकारः शरीरद्वयकारण मात्माज्ञान साभासमव्याकृतमुच्यते एतत्कारण-शरीरमात्मनस्तच्चनसन्नासन्नापि सदसन्न-भिन्न नाभिन्नं नापि भिन्नाभिन्नं कुतश्चिन्निरवयवं सावयवं नोभयं किन्तु केवलं ब्रह्मात्मैकत्व ज्ञाना-पनोद्यं सर्वप्रकारकज्ञानोपसंहारे बुद्धेः कारणात्मनावस्थानं सुषुप्तिस्तदुभयाभिमान्यात्मा प्राज्ञः एतत्त्रयं मकारः ॥ अकारमुकारे,उकारं मकारे मकारोऽहमेवात्मा साक्षी केवल चिन्मात्रस्वरूपोऽहं नाज्ञानं तत्कार्यञ्च किन्तुनित्यशुद्ध-बुद्धमुक्तस्वभावं परमानन्दाद्वयं परंब्रह्मैवाहमस्मि ॥ अहमेव परब्रह्मेत्य भेदेनावस्थानं समाधिः । ॐ प्रज्ञानं ब्रह्म ॥ अहं ब्रह्मास्मि ॥ ॐ तत्त्वमसि ॥ ॐ अयमात्माब्रह्मेत्यादि महावाक्येभ्यो-नित्यशः प्रणवात्मस्थम त्मज्योतिर्हृदिस्थितं चैतन्यमात्रममृतं सोऽहमस्मीतिभावयेत् ॥ तत्र कार्योपाधिचैतन्यं जीवशब्दवाच्यम् ॥ कारणोपाधिचैतयमीश्वरपदवाच्यम् ॥ उभयत्र चैतन्तमात्रं लक्ष्यन् ॥ लक्ष्यपदार्थग्रहणसामर्थ्येनाखण्डैकरसं ज्ञानंभवति ॥ कार्यकारणे परित्याज्ययल्लक्ष्यं शुद्धं तद्ब्रह्मोच्यते ॥

कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः ॥ कार्यंकारणतां हित्वा पूर्णबोधोऽवशिष्यते ॥१॥ इति श्रुतेः ॥

ऊपर पंचीकरण के सम्बन्ध में जो लिखा गया है, उसका स्पष्टार्थ नीचे लिखा जाता है। परमहंसों की समाधि-विधि इस प्रकार है —

छान्दोग्य उपनिषद् के षष्ठाध्याय में 'सदेव सोम्येदमग्रमासीदेकमेवाद्वितीयं'। सृष्टि के प्रारम्भ में केवल सत्यस्वरूप ब्रह्म ही रहा। वह एक ही अद्वितीय रहा—'सच्छब्द वाच्यम विद्या शबलं ब्रह्म'। आगे सृष्टि-समय में माया से मिश्रित हुए ब्रह्म से अव्यक्त हुआ, अव्यक्त से महत्तत्व, उससे बुद्धि (अहंकार), अहंकार से पंचतन्मात्रा और तन्मात्राओं से जगत की उत्पत्ति हुई।

अव्यक्त की व्याख्या कठोपनिषद् शांकर भाष्य में इस प्रकार की है—

अव्यक्तं सर्वस्य जगतो बीजरूपं अव्याकृत नाम रूप से तत्वं सर्व कार्य-कारण-समाहार रूपं अव्याकृताकाशादि नामे वाच्यं परमात्मन्योतप्रोतभावेन समाश्रितं वटकणि कार्यामिव वटबृक्षशक्तिः।

महतः स्वरूपं किं ? कठोपनिषद् शांकर भाष्येः— 'बुद्धे रात्मा सर्वप्राणि बुद्धिनां प्रत्यगात्मभूतत्वादात्मा महान् सर्व महत्वात् अव्यक्तायत्प्रथमं प्रथम जातं हिरण्यगर्भ तत्वं बोधाबोधात्मक महानात्मा बुद्धे पर इत्युच्यते'।

भावार्थ :—उस बुद्धि से भी, सम्पूर्ण प्राणियों की बुद्धि का प्रत्यागात्मभूत होने से, आत्मा महान् है क्योंकि वह सबसे बड़ा है, अर्थात अव्यक्त से सबसे पहले जो उत्पन्न हुआ हिरण्यगर्भ तत्व है, जो महान्, आत्मा (ज्ञानशक्ति, क्रियाशक्ति, सम्पन्न होने के कारण) बोधा बोधात्मक है, वह बुद्धि से भी पर है।

महत: परमव्यक्तमव्यक्तात्पुरुष: पर:, पुरुषान्न परं किंचित।
साकाष्ठा सापरागति:।

अहंकार से बुद्धि पंचतन्मात्रा (रसतन्मात्रा, गंधतन्मात्रा, रूपतन्मात्रा, स्पर्शतन्मात्रा), इन सूक्ष्मतन्मात्रों से पंचभूतों की उत्पत्ति हुई, जैसे पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश।

पंच महाभूतों का पंचीकरण

पंचीकरण के सम्बन्ध में वाद विवाद है। तैत्तरीय उपनिषद् में पंच महाभूतों का वर्णन है। उसी से सृष्टि बताई गई है, किन्तु वहाँ पर पंचीकरण नहीं है। छान्दोग्य उपनिषद् में तेज, जल, पृथ्वी—यह तीन बताए हैं। उनसे सृष्टि करने के लिए त्रिवृत्तकरण बताया है, पंचीकरण नहीं। किन्तु और सब निबन्ध-ग्रंथों में जो पंचीकरण बताया है वह त्रिवृतकरण का उपलक्षण समझना चाहिए, क्योंकि त्रिवृतकरण पंचीकरण के समान है।

द्विधा विधाय चैकैकं चतुर्धा प्रथमं पुन:। स्व स्वेतर द्वितीयांशयोर्जनात् पंच पंचते ॥ (पंचदशी)।

पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश—इन पाँचों महाभूतों का आधा-आधा भाग अलग रखना। दूसरा जो आधा भाग है, उसके चार भाग करना और सब भूतों के आधे आधे भाग में यह अष्टमांस (दो दो आने) का भाग मिला देना—यह पंचीकरण हुआ। ब्रह्म सूत्र के इस सूत्र

में—'वैशेष्यात्त् तद् वादस्तद्वाद:' इस सूत्र से जिस भूत का अधिक भाग है उसी का नाम पंचीकृत भूत को मिल गया।

पंचीकृत भूतों द्वारा सृष्टिक्रम आरम्भ हुआ है, वही विराट कहा जाता है। स्थूल शरीर, आत्मा, इन्द्रिय आदि का विश्व है। यह व्यष्टि के भेद हैं।

'एतत्स्थूल शरीरमात्मनरिन्द्रियैरर्थोपलब्धि जगारितं तदुभयाभिमान्यात्मा विश्वमेतत्रयमकार:'।

अपंचीकृत पंचमहाभूत और उनका कार्य अर्थात् दश इन्द्रियाँ, प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, मन, बुद्धि, इस तरह १७ तत्व वाला भौतिक सूक्ष्म शरीर (लिंग शरीर) का अभिमानी हिरण्यगर्भ (सूत्रात्मा) है। इसी प्रकार सूक्ष्म शरीर, आत्मा, इन्द्रिय, जागृत के संस्कार प्रत्यय: (जीव) विषयों के साथ स्वप्न का अभिमानी तैजस है।

व्यष्टि के भेद—विश्व, तैजस, प्राज्ञ। जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति।

समष्टि के भेद—विराट, हिरण्यगर्भ, सूत्रात्मा। चतुर्थ तुरीय, अकार, उकार, मकार।

ॐकार प्रणव में संसार, ईश्वर, ब्रह्म, सब कुछ समाहित है, इसलिये वेदों में ॐकार का ही महत्व बताया है।

जीवात्मा का शरीर से वियोग ही मृत्यु है। स्थूल शरीर को भस्म या मृत्तिका में या जल में प्रवाहित करते हैं।

सूक्ष्म शरीर देहान्तर में जाता है, कारण शरीर अज्ञान, महाकारण ब्रह्म में। अज्ञान सत् भी नहीं, असत् भी नहीं, सत्-असत् भी नहीं है।

सत् क्यों नहीं? नाशवान है? असत् क्यों नहीं? कार्योत्पादक है, परस्पर विरोधी हैं। स्थूल का लय सूक्ष्म में, सूक्ष्म का ... कारण में, कारण

का महाकारण में होता है। कार्य शरीर है। कारण इन्द्रिय हैं। जब दोनोंनहीं रहते तब शुद्ध बुद्ध ब्रह्म ही शेष रहता है। यही ध्यान करना तथा जानना महात्माओं की समाधि है।

मानसपूजाप्रकारः

ॐ विष्णुं भास्वत्किरीटाङ्गदवलययुगाकल्पहारोदराङ्घ्रि श्रोणीभूषं सुवक्षोमणिमकरमहाकुण्डलामण्डिताङ्गम्॥ हस्तोद्यच्छंखचक्राम्बुजगदममलं पीतकौशेयवासोविद्युद्भासमानं दिनकरसदृशं पद्मसंस्थं नमामि ॥१॥
हृदयकमलमध्ये दीपवद्वेदसारं प्रणवमयमतर्क्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम्॥ हरिगुरुशिवयोगं सर्वभूतस्थमेकं सकृदपि मनसा यश्चिन्तयेत्स्यात्स मुक्तः ॥२॥ देहेन्द्रियमनोबुद्धिप्रकृतिभ्यो विलक्षणम्॥ सच्चिदानंदमद्वैत परं ब्रह्मास्मि केवलम् ॥३॥
इति ध्यात्वा प्रणवयुक्तस्ववेदशाखान्तरगतानि महावाक्यानि पठेत् ॥

ॐ तत्वमसि श्वेतकेतो ॐ सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति ॐ प्राणो ब्रह्म कंब्रह्म खं ब्रह्मेति ॐ योऽक्षिणि पुरुषो दृश्यते स आत्मेति ॥ मुख हो वाचैतदभयमृतं ब्रह्मैतदिति ॐ तद्योऽहंसोऽसौ सोऽहमिति ॥ ततोऽष्टोत्तरशतजपपूर्वकप्राणायामत्रयंकुर्यात ॥ तदन्तरं जलमध्येष्टदलं प्रकृत्य तत्र ॐ नमो नारायणायेत्यष्टाक्षर मंत्र लिखेत् ॥ ततस्तन्मध्ये सपरिवारदेवमादित्यमंडलास्स्वहृदयाद्वा हस्तद्वयाङ्गुष्ठाभ्यां प्रणवान्वितश्वासमार्गेण विष्णुमावाह्य तद्यथा ॥ आगच्छ देवदेवेश शखचक्रगदाधर ॥ गृहाणास्मत्कृतां पूजां चक्रेऽस्मिन्सन्निधोभव ॥१॥ ततः शंखचक्रगदावेनुरुडमुद्राप्रदर्शनम्। दिव्यात्मने कीरीटायनम ॥ सर्वात्मने पटबंधायनमः॥ सावित्र्यात्मने तिलकायनमः॥ शब्दादिविषयात्मने मकरकुण्डलायनमः ॥ पुरुषात्मने कौस्तुभाय नमः॥ पञ्चभूतात्मने वनमालायैनमः॥ दिगात्मने पीताम्बराय नमः॥ मनोवेगात्मने चक्रायनमः॥

अहंकारात्मने पाञ्चजन्यायनमः ।। आनन्दात्मने पद्मायनमः ।। बुद्धितत्त्वात्मने कौमुदक्यैनमः ।। इति नमस्कृत्य ।।

पंचोपचारपूजनम्

ॐ लं पृथ्वीगंधतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मपरमेश्वराय गन्धं परिकल्पयामि ।। ॐ हं आकाशशब्दतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मपरमेश्वराय पुष्पं परिकल्पयामि ।। ॐ यं वायुस्पर्शतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मपरमेश्वराय धुपं परिकल्पयामि ।। ॐ रं अग्निरूपतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मपरमेश्वराय दीपं परिकल्पयामि ।। ॐ वं अमृतरसतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मने परमेश्वराय नैवेद्यं परिकल्पयामि ।। ॐ सं शक्तिसर्वतन्मात्रप्रकृत्यानंदात्मने परमेश्वराय पुष्पांजलिं परिकल्पयामि ।। इति ।।

तर्पणम्

ॐ वमित्यमृतबीजेन धेनुमुद्रया जलेऽमृतरूपं ध्यात्वा प्रणवेन द्वादशवारमभिमंन्त्र्याष्टोत्तरशतवारञ्च तर्पयेत् ऋषींस्तर्पयामि ।। छन्दांसि तर्पयामि ।। देवतास्तर्पयामि ।। हृदयदेवं तर्पयामि ।। शिरोदेवं तर्पयामि ।। शिखादेवं तर्पयामि ।। कवचदेवं तर्पयामि ।। नेत्रदेवं तर्पयामि ।। अस्त्रदेवं तर्पयामि ।।

अर्घ्यप्रदानम्

ॐ आत्मैवेदंसर्वम् ।। ॐ ब्रह्मवेदं सर्वम् ।। ॐ सर्वं खल्विदं ब्रह्मेति त्रिवारमञ्जलिं दद्यात् ।।

उत्तरपूजनम्

पूर्ववत्संपूज्य स्वहृदये सपरिवारदेवमुद्वासयेत् उत्तिष्ठोत्तिष्ठदेवेश पुनरागमनायच ।। प्रसिद त्वं महेशान प्रविश्य हृदये मम ।।१।। दक्षिणहस्ते जजमादाय प्रणवेन

द्वादशवारमभिमन्त्र्य वामकरे निक्षिप्य वद्गति तोदकेनशिरःसंप्रोक्ष्य चाचम्य प्राणायामत्रयं कुर्यात् ॥ जलमादायो संकल्पः ॐ मनसा चिंचितं यन्मे वचसा भाषितं पुनः ॥ कायेन कर्म सर्वं ब्रह्मार्पणं भवेदिति ॥१॥

प्रणवोच्चारेणदण्डतर्पणम्

द्वादशं दण्डमूलेतु दण्डमग्रेपि तथैवहि। मुद्रायां द्वादशं प्रोक्तं प्रतिपर्वंत्रिधामतम् ॥१॥ द्विधालोड्य च मध्येन मूले प्रोक्तं नवाङ्कितम् ॥ अग्रे सप्ताङ्कितं *प्रोक्तमिति दण्डस्य तर्पणम् ॥२॥ शिरः प्रोक्षणमग्रेण मूलेन पादप्रोक्षणम्। सुराश्चितष्ठान्त दण्डाग्रे दण्डमूलेतु पूर्वजाः ॥३॥ प्रतिग्रन्थितु गन्धर्वा मध्येतिष्ठन्तुमानवाः अस्माकं ये कुलेजाता नामगोत्रविवर्जिताः ॥४॥ तेसर्वे तृप्तिमायांतु दण्डसंवधिवारिणा ॥५॥वस्यस्मृत्येतिसमाप्य दिक्पाल गुर्वादीन्न प्रणमेत् ॥ ततोभाष्यप्रथानां श्रवणविधिना श्रवणादिकञ्चकुर्यात ॥

तुरीय संध्या

ॐ अजपानामगायत्री योगिनां सिद्धिदामता । हंसपदं महेशानि प्रत्यहं जपते नरः ॥१॥ मोक्षाद्यो वै न जानाति मोक्षस्त-स्यनविद्यते । अजपां जपतो नित्यं पुनर्जन्म न विद्यते ॥२॥ हकारेणबहिर्यान्तं विशन्तञ्च सकारतः । चिन्तयेत्परमेशानि जीवन्तं पक्षिरूपिणम् ॥३॥ श्रीगुरोः कृपया देवि ज्ञायते जप्यते यदा। उश्वास निश्वास तथा बन्धमोक्षस्तदा भवेन् ॥४॥

न्यासाः

ॐ हं सां सूर्यायांगुष्ठाभ्यां नमः। हं सीं सोमायतर्ज नीभ्यां नमः। ॐ हं सूं निराभासायानामिकभ्यां नमः। ॐ हं सौ अतनुशूक्ष्मायकनिष्ठिकाभ्यांनमः। ॐ हं सः अव्यक्तप्रबोधात्मने

करतलपृष्ठाभ्यां नमः ॥ एवं हृदयादि ॥

ध्यानम्

ॐ अस्य हंसस्य देवेशि निगमागमागनपक्षकौ। उभावपि चाग्निसोमौ वक्त्रो हंसशिरोभवेत् ॥१॥ बिन्दुत्रयंशिखानेत्रे मुखं नादः प्रकीर्तितः शिवशक्ति पदद्वन्द्वं कालाग्नि पार्श्वयुग्मकम् ॥२॥ हंसः परमहंसोऽयं सर्वव्यापी प्रकाशवान । सूर्य कोटी प्रकाशश्च स्वप्रकाशेनभासते ॥३॥ ततो यथाशक्ति हंसमंत्र पजप्य समष्टिव्यष्टिक्रमेण। ॐ हं सं निरंजनाय सध्वसाम्या नमः ॥४॥

जपनिवेदनम्

ॐ गतारुणोदयादारभ्यारुणोदययेन्तं बहुश्वासानुसारकृतषट्-शताधिकैकविंशतिसहस्रजपाजपेन गणेशब्रह्मविष्णुमहेशजीव-परमात्मगुरवः प्रीयन्ताम् चतुर्दले मूलाधारे षट्शतेन साङ्गापाव-रणः सायुधः स शक्तिकः सवाहनः श्रीगणेशः प्रियताम्। षड्दले स्वाधिष्ठाने सहस्रषट्केन० ब्रह्माप्रीयताम्। दशदले मणिपूरके सहस्रषट्केन विष्णुः प्रीयताम्। द्वादशदलेऽनाहतचक्रे सहस्र-षट्केन महेशः प्रीयताम्। षोडशदले विशुद्धौ सहस्रेण जीवात्मा प्रीयताम्। द्विदलात्मकाज्ञाचक्रे सहस्रेण परमात्मा प्रीयताम्। सहस्रदले ब्रह्मरन्ध्रे सहस्रेण० सत्गुरुः प्रीयताम्। गुह्याति-गुह्यगोप्त्र त्वं गृहाणास्मत्कृतंजपम्। सिद्धिर्भवतुमेदेवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥१॥

त्रैलोक्यचैतन्यमयीश्वरेश्वरिः श्रीसुन्दरि त्वच्चरणाज्ञयैव। प्रातः समुत्थायतव प्रीयर्थं संसारयात्रामनुवर्तयिष्ये ॥२॥

एवं सन्ध्योपासनं विधायान्ते स्वाधिकारानुरूपप्रणवजपं प्रकुर्वीत। तथा चोक्तम्। जपेद्वादशसाहस्त्रं प्रणवस्य प्रयत्नतः। सहस्त्रं तु श्रवणार्थी योगाभ्यासीशतंजपेत् ॥१॥ निर्विकल्पसमाधिस्तु न जपेत्किञ्चिदद्वयात्।

जपनिवेदनमंत्रः

पुण्डरीकाक्षविश्वात्मन् मंत्रमूर्ते जनार्दन। गृहाणेमंजपं-नाथममदीनस्य शाश्वत ॥१॥

इति विश्वेश्वरसरस्वतिरूपविरचितयतिधर्मसंग्रहे ॥

परिव्राज्यधर्मवन्तो यज्ज्ञानाद्ब्रह्मतांययुः। तद्ब्रह्मप्रणवैकार्थं-तुर्यंहरिं भजे ॥१॥

संक्षेपविषयः

प्रातरुत्थाय वेदान्तस्त्रोत्रपठनपूर्वकं तीर्थादौ स्नात्वासंध्योपासनं प्रकुर्वीत '।

दण्डप्रकाराः

षड्भिः सुदर्शनं प्रोक्तं नारायणमथाष्टकैः। वासुदेवं द्वादशभिर्गोपालं कशभिस्यथा ॥१॥ चतुर्दशभिश्चानन्तमवऊर्ध्वं न धारयेत षड्भिर्ग्रन्थिभिरित्यादिज्ञेयम्।

दण्डपतनग्रहणमन्त्राः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भगवन्नारायण जगत्पते। दण्डरूपिन् महाविष्णो प्रसोदपुरुषोत्तोम। मातृपितृसमोदण्डो। भ्रातरो गुरवस्तथा। पथिसाधनहेतुश्च ब्रह्मसुद्रे नमोऽस्तुते ॥२॥ विष्णुहस्ते यथा चक्रं शूलं विशकरे यथा। इन्द्रहस्ते यथावज्रं तथादण्डो भवाद्यमे ॥३॥

नित्यग्रहणमन्त्रः

उत्तिष्ठोत्तिष्ठ देवेश देवानां हितकाम्यया। देवतारिविनाशाय सदा मम करे भव ॥१॥

स्थापनमन्त्रः

तिष्ठत्वं देवदेवेश तिष्ठत्वं दण्डदेवत। ऋषिभिर्मुनिभिश्चैव गन्धर्वैश्च समं सदा ॥१॥

कमण्डलुशुद्ध्यादिकम्

यतेश्चत्वारि पात्राणि मृद्वेणुदार्वलाम्बुमयानि ॥

जलाग्निश्च कराग्निश्च महाग्निश्चैव संनिधौ। अग्नित्रयप्रभावेण शुद्धोभव कमण्डलो ॥१॥ कमण्डलो महातीर्थपुण्योदकपरायण। अगस्त्यादि मुनिश्रेष्ठै र्धृतोऽसि त्वं कमण्डलो। स्नानसन्ध्यादि कृत्येषु त्वमेकः साधनं मम ॥२॥

काषायकरणविधिः

तत्रादौ द्रवीकृतगैरिकमध्ये षड्दलं विधाय तन्मध्ये ॐ ऐं क्लीं हुँ फट् इति षडाक्षरमन्त्रमुल्लिख्य ! मेरुगर्भसमुद्भूते गैरिके वह्निरूपिणि त्वया रंजित वस्त्रेण योगसिद्धिं तु मे कुरु॥१॥

यतिक्षौरविधिः

मासे मासे गृहस्थस्य पक्षेपक्षे च यज्वनाम्। ऋत्वन्ते मस्करिणां यथेच्छं ब्रह्मचारिणाम् ॥१॥ यदा ह्यधिक मासःस्यात्तदा क्षौरद्वयं भवेत्। मासद्वयेन प्रथमं मासेनैकेनचापरम् ॥२॥ मास त्रयेणैकंवाऋतुश्चैवसः भवेद्यतः एवं क्षौरद्वयं कार्यमितिशास्त्रस्यनिर्णयः ॥३ त्रिमुहूर्ताधिका ग्राह्या पौर्णमासीप्रमाणतः। कनिष्ठादि प्रकुर्वीतपर्व क्षौरं विचारतः ॥४॥

यतिमस्तके रक्तस्रावश्चेद् द्विगुणप्राणायामान् कुर्यात्। मध्य पुरीषादिकं चेद्द्विगुण शौचमाचरेत्। तत्रादौ कृतनित्य कर्मा परशुमुद्रा

वन्दनपूर्वकं दिक्पालगुर्व्येष्ठादिवन्दनमाचरेत्। विशेषतो गुरुं प्रार्थयेत्। क्षौराद्यर्थं प्रार्थयामि त्वद्यपर्वण्यहं प्रभो। अनुज्ञां देहि मां तात गमिष्यामि हिताय वै ॥१॥

गुरुरुवाच। गच्छ तात स्वकार्यार्थं सादरं भक्तिपूर्वकम्। तद्योगसिद्धि माप्नु हि तद्विष्णोः परमपदम् ॥१॥ हस्तपाददादि प्रक्षालनपूर्वकमाचमनप्राणायामत्रयञ्च कृत्वा प्रणवेन क्षौरभूमिं संप्रक्ष्य तत्र पत्रावलिं निधायाष्टादलं लिखेत्। ततोधेनुमुद्राप्रदर्शनम्। नापितस्य हस्तौ द्वादशवारं प्रक्षालित्वा क्षौरोपयोगिशस्त्राणि संशोध्य सूर्याय दर्शयित्वा च पात्रे परिसंस्थाप्य। स्वशिरं अग्रे कृत्वा। मेरुदण्डलतुल्यानि पातकानि महान्त्यपि। केशानाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मात्केशान्वताम्यहम ॥१॥ इति मन्त्रेण स्वहस्तेन क्षौरसंस्कारमाचरेत्। दक्षिणवामभागे जलपूरितञ्च द्रोणान्निधाय तन्मध्येऽङ्गुलीदद्यात् मौनेनक्षौरम्। ततस्तीर्थगमनम्। तत्र गर्तं विधाय केशादीन्निक्षिपेत्। पश्चाज्जले द्वादशवारं निमज्य तीरमासाद्य नारिकेलसमं मृत्पिण्डमादायाष्टधा विभज्य प्रत्येकभाग मूलमन्त्रेण द्वादशवारमभिमन्त्र्य सूर्याय दर्शयित्वा क्रमेण मृत्तिकभागेन हस्तपादमस्तकमुख बाहुकमण्डलुवासः कौपिनानि क्षालयेत् ॥ पुनश्च बिल्वमानपिण्डमादाय भागत्रयं कृत्वा द्वयेन कक्षाद्वय विषाध्य शेषं विसृजेत्। पुनस्त्रिवारं जले निमज्य तीरमासाद्य षोडशगंडूशान्षोडशप्राणायामांश्च विधाय किञ्चित्प्रणवजसपूर्वकदण्डकमण्डलुसहितं स्नात्वा धौते वाससी परिधाय माध्याह्नकं कृत्वा मठे गच्छेत। गुरुवन्दनम्। भो भो स्वामिन्दयासिन्धो प्रार्थयिष्यामि तेऽधुना। पर्वण्यादिनमस्कारे चानुज्ञां दातुमर्हसि ॥१॥ क्षौरकर्मंतु यन्न्यून परिपूर्णम वदस्तु मे। आचारहीनाहं देव यथावत्कुरु दि मां प्रभो ॥२॥ वङ्मनःकायसभूतान्पराधान्यद्यत्व मे। सर्वेऽपराधाःक्षन्तव्याः शिक्षितव्यं पुनः पुनः ॥३॥ अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया। दासोऽयमितिमां मत्वा क्षमस्व पुरुषोत्तम ॥४॥ गुरुरुवाच। सुखेन वर्ततां धर्मे चित्ते ब्रह्म विचिन्तय। इति क्षौरविधिः ॥

भिक्षाप्रकरणम्

मधुकरमसंक्लृप्तं प्राक्प्रणीतमयाचितम् । तत्कालिकञ्चोपपन्नं भैक्षं पञ्चविधंस्मृतम् ॥१॥ नामगोत्रादिचरणं देशकालं श्रुतं कुलम् । शीलं व्रतं वयः पूर्वख्यापयेन्नैव सद्यतिः ॥२॥ प्रवासी यदि संन्यासी रात्रौ भुजनन्नदुष्यति । दिवायदि न भुक्तं चेन्नापदोषः प्रकीर्तितः ॥३॥ ब्रह्मक्षत्रियवैश्यानां सेव्यानां भैक्षमाचरेत् । द्विजाभावेतुसंप्राप्ते उपवासत्रयेगते ॥४॥ फलं शूद्रादपि ग्राह्यं प्राणं रक्षेत्सदायतिः । यावदुदरपूर्तिःस्यात्तावद्भैक्षं समाचरेत् ॥५॥ पितुःक्षतुचाशौचतदर्धभ्रातृपुत्रयोः । सपिण्डानान्तुसर्वेषां मासमेकं विवर्जयेत् ॥६॥ मासत्रयंतुभार्याया मासैक्य पुत्र जन्मनि । चत्वारिंशद्दिनं त्याज्यं कन्याजन्म हि यद्गृहे ॥ महिषी गौरवमांजारी शुनी वाजा प्रसूतिका । दसरात्रं न गृह्णीयाद्भिक्षा तस्य गृहे यतिः ॥८॥ इष्टयन्नन्नैव भोक्तव्यं सत्कारान्न तथैव च । भिक्षात्रनकर्तव्या यत्रक्षौरविधिर्गृहे ॥९॥ वैश्वदेवस्य यःकर्ता तस्यभार्या रजस्वला । तत्रभिक्षानतव्या भिक्षुणा हितमिच्छता ॥१०॥ श्राद्धान्नंगृह्णीयाद्यादिभक्षणमागतम् । कुक्षौ स्थितं यावदान्नं तावत्प्रेतत्वमाप्नुयात् ॥११॥ अयने विषुवे चैव चन्द्रादित्योपरागयोः । भुक्तंदृष्टवानभोक्तव्यं स्नानं कृत्वा ततः परम् ॥१२॥ अर्धोदये च सिंहस्थे कपिलाषष्टोपर्वणि । यतिभिश्वापिकर्तव्य मनशवाप्युषोषणं ॥१३॥ उपवासः प्रकर्तव्यः क्षौर पर्वदिने तथा ॥

श्रेष्ठांमाधुकरीं भिक्षा तामिच्छेच्चसदायतिः । मधुवदाहरणयतन्माधुकरमिति स्मृतम् ॥१७॥ गच्छेतसंकल्परहितान्गृहांस्त्रीन्पञ्च सप्तवा । सत्कृत्य प्रभवेनाथ भिक्षापात्रयथाविधि ॥१७॥ यतिहस्ते जलदद्याद्भिक्षां दद्यात्पुनर्गलम् । तदन्नं मेरुता तुल्यं जल्लं सागरोपमम् ॥१॥ यस्यगृहे यातभुङ्क्ति तस्यगृहे ...हविःस्वयम् । ... यस्यगृहे

हरिर्भुङ्क्ते तस्य गृहे जगत्त्रयम् ॥८॥ इति मण्डलं पूतामंत्रौ भद्रानन्तरं पुराण श्रवणेनशेषकालं नयेत् ॥ इति संक्षेपनिर्वाहः॥

ॐ कं खं ब्रह्म

शाङ्करमठसंप्रदायोया: शान्तय:

श्री चिन्तामणि गणपतयेनमः विश्वेशं माधवं ढुण्ढि दण्ड पाणिं च भैरवम्। वन्दे काशी गुहां गंगां भवानी मणिकर्णि-काम् ॥१॥

स्मृते शकल कल्याण भाजनं यत्र जायते। पुरुषस्तमज नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥२॥

ॐ शन्नोमित्रः शंवरुणः। शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः। शन्नोविष्णुरुरुक्रमः। नमोब्रह्मणे। नमस्तेवायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वमेवप्रत्यक्षं ब्रह्मवदिस्यामि। ऋत-वदिस्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तार मवतु। अवतुमां। अवतुवक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥१॥

ॐ सहनाववतु। सहनौभुनक्तु। सहवीर्यंकरवाहै। तेज-स्विनावधीतमस्तु। माविद्विषावहै। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥२॥ ॐ यश्छन्दसामृषभो विश्वरूपः छन्दोभ्य ऽध्यमृतात्संबभूवसमेन्द्रामेधया स्पृणोतु। अमृतस्यदेव धारणो भूयासम्। शरीरं मेविचर्षणम्। जिह्वामेमधुमत्तमा। कर्णाभ्यां भूरिविश्रुवम्। ब्रह्मणः कोशोऽसमेधया पिहितः। श्रुतंमेगोपाय। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥३॥

ॐ अहं वृक्षस्यरेरिव। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्व पवित्रो वाजिनीव स्वमृतमस्मि। द्रविण सवर्चसम्। सुमेधा अमृतो क्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥४॥

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदंपूर्णात्पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥५॥

ॐ आप्यायन्तुममाङ्गानि वाक् प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बल

मिन्द्रियाणि च सर्वाणि सर्वं ब्रह्मोपनिषदम् माहं निराकुर्यां माभा ब्रह्म निराकरोदनिराकरणमस्त्वनिराकरणं मे अस्तु। तदात्मनि निरतेय उपनिषत्सु धर्मास्ते मयिसन्तुते मयि सन्तु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥६॥

ॐ वाङ् मेमनसिप्रतिष्ठितामनोमेवाचि प्रतिष्ठितमावीरावीमं एधिवेदस्य म आणीस्थ श्रुत मे माप्रहासीःनेनाधीतेना होरा-त्रात्सदधाम्यमृत वादिष्यामि । सत्यं वदिष्यामि । तन्मामवतु-तद्वक्तारमवतु अवतुमामवतु वक्तारम् । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥७॥

ॐ भद्रं नो अपिवातय मनः । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥८॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयामदेवाः भद्रं पश्येमाभियजत्राः ।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसस्तनुभिर्व्यशेम देवहितंयदायुः ।
स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिन-स्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु । ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥९॥

ॐ यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं योवै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै । तँह देव मात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये । ॐ शान्तिः शान्तिः ॥१०॥

ॐ नमो ब्रह्मादिभ्यो ब्रह्मविद्या संप्रदायकर्तृभ्यो वंशऋषि-भ्यो महद्भ्यो नमोगुरुभ्यः । सर्वोपप्लवरहितः प्रज्ञानघनः प्रत्य-गर्थो ब्रह्मैवाहमस्मि ॥११॥

ॐ नारायणं पद्मभवं वसिष्ठं शक्तिं च तत्पुत्रपराशरं च ।
व्यासं शुकं गौडपदं महान्तम् गोविन्दयोगीन्द्र मथास्य शिष्यम्॥१॥
श्री शंकराचार्यमथास्य पद्मपादं च हस्तामलकं च शिष्यम् ।
तं त्रोटक वार्तिककारमन्यानस्मद्गुरून्संततमानतोऽस्मि ॥२॥
श्रुति स्मृति पुराणानामालयं करुणालयम् । नमामि भगवत्-पादं शंकरं लोकशंकरम् ॥३॥

शंकरं शंकराचार्यं केशवं बादरायणम् । सूत्र भाष्यकृतौ वन्दे भगवन्तौ पुनः पुनः ॥४॥

ईश्वरो गुरुरात्मेति मूर्तिभेदविभागिने । व्योमवद्व्याप्त-देहाय दक्षिणामूर्तये नमः ॥५॥

वेदान्तार्थविभासकाय गुरवे शान्ताय संन्यासिने नाना वादि नगेन्द्र संघ पवये योगिन्द्र वंद्यायच मोह ध्वान्तदिवा-कराय भगवत्पादाभिधां बिभ्रते तस्मै भाष्यकृते नमोस्तु रुवत पूर्णाय बोधात्मने ॥६॥

अनध्याय मंगल शांतिः

अशुभानि निराचष्टे तनोति शुभ संततिम् ।
स्मृति मात्रेण यत्पुंसां ब्रह्मतन्मंगल परम् ॥१॥
अविकल्याणरूपत्वान्नित्य कल्याण संश्रयात् ।
स्मर्तृणाम बरदत्वाच्च ब्रह्म तन्मङ्गलविदुः ॥२॥
ॐ काश्चाथ शब्दश्च द्वावेतौ ब्रह्मणः पुरा ।
कठंभित्वा विनिर्यातौ तस्मान्मांगलिकावुभौ ॥३॥
ॐ अथ ॐ अथ तत्सत्परब्रह्मार्पणमस्तु ॥

सन्यास का महत्व

त्रिशतूरां त्रिसदवांश्त्रिशच्च परतः परान् । सद्यः सन्यस-नादेव नरकात्तारयेत्पतृन् ॥१॥ षष्टि कुलान्यतीतानि षष्टि-मागामिकानिच । नम्कदुद्धरत्येव संन्यस्तोऽहमिति ब्रुवन् ॥२॥ न सुखं देव राजस्य न सुख चक्रप णिनः । यादृशं वीतरागस्य मुनेरकांत वासिन. ॥३॥

डंडात्मा का संयोग

दंडात्मनोस्तु सयोगः सवदैव विधीयते । न दंडेन विना-गच्छेत् दिषुत्पेत्रयंबुधः ।

एक दंडा को आवश्यक कार्य

मौनं योगासन योगास्तितिक्षैकांत शीलता निःस्पृहत्व समत्व च

सप्तैतान्येक दंडिनः। भिक्षाटनं जापोध्यानं शौचं सुरार्चनं कर्तव्यानि षडेतानि यतिना नृपदंडवत। अयाचितं यथालाभ भोजनाच्छादनं भरेत्।

निन्दा, स्तुति और स्त्रियों के संसर्ग का त्याग

न निन्दां न स्तुतिं कुर्यान्न कंचिन्मर्माणि स्पृशेद् न संभाषेत्स्त्रिय काँचित्पूर्व दृष्टां न च स्मरेत्।

संभाषणं सहस्त्रीभिरालाप प्रेक्षणं तथा नृत्यं गानं सभासेवा। परिवादांश्च वर्जयेत्। किं विद्यया किंतपसा किंत्यागेन श्रुतेन वा किंविविक्तेव मौनेन स्त्रीभिर्यस्य मनोहृतम्।

यस्तु प्रव्रजितो भूत्वा पुनः सेवेत मैथुनम्। षष्टिवर्ष सहस्त्राणि विष्ठायां जायतेकृमिः।

प्रत्येक संन्यासी के लिए स्त्रियों का संसर्ग त्याज्य है।

ॐ! ॐ! ॐ!

कीर्तन

—:०:※:०:—

श्री राम जैराम जय जय राम।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे,

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हर हर महादेव शम्भो, काशी विश्वनाथ गंगे।

जय साम्ब सदा शिव स [illegible]।

हर हर मृत्युञ्जय शिव साम्ब॥

(१)

शिव हर शंकर गौरीशं, वंदे गंगा धरणीशं।

शिवशम्भो, हरशम्भो। जय गौरी शंकर हर शम्भो॥

महादेव शिवशकर शम्भो, उमाकान्त त्रिपुरारे।

मृत्युञ्जय वृषध्वज शूलिन गंगाधर मृड मदनारे ॥
शिवशम्भो ! हरशम्भो जय गौरीशंकर हरशम्भो ।

(२)

कृष्णानन्द मुकुन्द मुरारे, केशव माधव गोविन्द ।
अच्युत केशव वामन विष्णु, लक्ष्मी नायक नरसिंह ॥

(३)

जय नारायण ब्रह्म परायण, श्रीधर कमलाकांत ।
भक्तजनप्रिय पंकजलोचन नारायण भव मम शरणम् ॥

(४)

नमोऽस्तुनेवाय सहस्र मूर्तये सहस्रपादक्षि शिरोरुबाहवे ।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते, सहस्रकोटि युग धारिणे नमः ॥

(५)

गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे ।
गोबिन्द गोबिन्द मुकुन्द कृष्ण ॥
कृष्णाय वासुदेवाय, हरये परमात्मने !
प्रणव क्लेशनाशाय, गोविन्दाय नमोनमः ॥

(६)

शिवेति मंगलं नाम यस्य नाम प्रवर्तते,
भस्मी भवन्ति तस्याशुः महापातक राशयः ।
शिवेति परमात्मेति शंकरेति हरेति च,
पार्वती प्राणनाथेति भज जिह्वे निरन्तरम् ॥

(७)

यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या, तपो यज्ञ क्रियादिषु,
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वंदे तमच्युतम् ।
अच्युतं केशवं रामनारायणं कृष्ण दामोदरम् ।
वासुदेवं हरिम्, श्रीधर माधव गोपिका वल्लभम् ।
जानकी नायकं रामचन्द्रं भजेहं ॥

(८)

सर्वेऽत्र सुखिनः संतु, सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, माकश्चिद् दुःख भाग्भवेत् ॥

इति

Pcs 1070

2

Colgate

Dental Cream

50 g

MADE IN INDIA
EGD. TM OF COLGATE-PALMOLIVE COMPANY
ACTURED BY: COLGATE-PALMOLIVE (INDIA) LIMITED
BOMBAY-400 020. LICENSED USER

PM-557

WHOLESALE PACKAGE